पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
2012 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 10898

==========

दिलीप कुमार प्रसाद, पुत्र- श्री बलभद्र प्रसाद, ग्राम-धमदाहा, थाना- धमदाहा, जिला-पूर्णिया

.....याचिकाकर्ता/ओं

बनाम्

1. कोसी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिसका नाम बदलकर अब उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक कर दिया गया है, इसके अध्यक्ष, प्रधान कार्यालय, शर्मा कॉम्प्लेक्स, कलमबाग रोड के माध्यम से, मुजफ्फरपुर

2. अध्यक्ष, कोसी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिसका नाम बदलकर अब उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक कर दिया गया है, प्रधान कार्यालय, शर्मा कॉम्प्लेक्स, कलमबाग रोड, मुजफ्फपुर

3. महाप्रबंधक, कोशी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिसका अब नाम बदलकर उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक कर दिया गया है, मुख्य कार्यालय, शर्मा कॉम्प्लेक्स, कलामबाग रोड़, मुजफ्फरपुर

4. अनुशासनात्मक प्राधिकरण-सह-महाप्रबंधक कोशी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिसका अब नाम बदलकर उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक कर दिया गया है, मुख्य कार्यालय, शर्मा परिसर, कालमबाग रोड, मुजफ्फरपुर

5. क्षेत्रीय प्रबंधक कोशी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिसका अब नाम बदलकर उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक कर दिया गया है, क्षेत्रीय कार्यालय, झांझरपुर, जिला-मधुबनी

.....उत्तरदाता/ओं

==========

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओं के लिए	:	श्री अरूप कुमार चौगदार, अधिवक्ता श्री नजीर अंसारी, अधिवक्ता सुश्री ईशा, अधिवक्ता
बैंक के लिए	:	श्री प्रभाकर झा, अधिवक्ता श्री अमितेश झा, अधिवक्ता

==========

अधिनियम/धाराएं/नियम:

- उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक (अधिकारी एवं कर्मचारी) सेवा विनियमन, 2010 का विनियमन 39(2)(बी)(6)

संदर्भित मामले:

- *अध्यक्ष स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम एम.जे. जेम्स (2022) 2 एससीसी 201 में रिपोर्ट किया गया*
- *क्षेत्रीय प्रबंधक, यू.पी.एसआरटीसी, बनाम होती लाल, 2003(3) एससीसी 605 में रिपोर्ट किया गया*
- *बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम टी जोगराम, 2007 (7) एससीसी 236 में रिपोर्ट किया गया*
- *सीडब्ल्यूजेसी संख्या 2573/2015 (शिबातोष दत्ता बनाम उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक एवं अन्य)*
- *अनुशासनात्मक प्राधिकारी-सह-क्षेत्रीय प्रबंधक बनाम निकुंज बिहारी पटनायक, (1996) 6 एससीसी 69 में रिपोर्ट किया गया*
- *गणेश संत राम सिरुर बनाम भारतीय स्टेट बैंक एवं अन्य, (2005)1 एससीसी 13 में रिपोर्ट किया गया*
- *केनरा बैंक बनाम वी.के. अवस्थी, (2005)6 एससीसी 321 में रिपोर्ट किया गया*

- *भारतीय स्टेट बैंक एवं अन्य बनाम बेला बागची एवं अन्य, (2005)7 एससीसी 435 में रिपोर्ट किया गया*
- *दमोह पन्ना सागर ग्रामीण क्षेत्रीय बैंक एवं अन्य बनाम मुन्ना लाल जैन, रिपोर्ट (2005)10 एससीसी 84*
- *स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम रमेश दिनकर पुंडे, रिपोर्ट (2006)7 एससीसी 212*
- *स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम एस.एन.गोयल, रिपोर्ट (2008)8 एससीसी 92*
- *जनरल मैनेजर (पी), पंजाब एंड सिंध बैंक एवं अन्य बनाम दया सिंह, रिपोर्ट (2010)11 एससीसी 233*
- *टी.एन.सी.एस. कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम के. मीराबाई, (2006)2 एससीसी 235 में रिपोर्ट किया गया*
- *बी. सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ और अन्य (1995) 6 एससीसी 749*
- *ओम कुमार बनाम भारत संघ (2001) 2 एससीसी 386 में रिपोर्ट किया गया*
- *ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम अशोक कुमार अरोड़ा (1997) 3 एससीसी 72*
- *स्टेट बैंक ऑफ इंडिया और अन्य बनाम टी. जे. पॉल (1999) 4 एससीसी 759*

रिट याचिका *- उस आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई, जिसके तहत याचिकाकर्ता को बैंक द्वारा सेवा से बर्खास्त कर दिया गया।*

याचिकाकर्ता को 1980 में बैंक में क्लर्क-कम-कैशियर के रूप में नियुक्त किया गया था, लेकिन 2000 में सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। उन्हें सहानुभूति के आधार पर फिर से नियुक्त किया गया था, लेकिन उनकी सेवा दोबारा समाप्त कर दी गई। अनुशासनात्मक कार्यवाही में याचिकाकर्ता को कई दुराचार के आरोपों का दोषी पाया गया।

निर्णय *- याचिकाकर्ता को पर्याप्त अवसर दिया गया और यह नहीं कहा जा सकता कि अनुशासनात्मक कार्यवाही अचानक समाप्त कर दी गई। याचिकाकर्ता ने तीन गवाहों की परीक्षा की और यह दावा कि उन्हें जांच रिपोर्ट प्रदान नहीं की गई, इस तथ्य को देखते हुए अस्वीकार्य है कि रिपोर्ट आदेश के माध्यम से उन्हें भेजी गई थी और उन्होंने अपना उत्तर भी प्रस्तुत किया था। (पैरा 18)*

याचिकाकर्ता को पहले भी दंडित किया गया था, लेकिन उन्होंने अपने व्यवहार में सुधार नहीं किया और बैंकिंग नियमों में निर्धारित मानदंडों का उल्लंघन करते रहे, जो एक बैंक कर्मचारी से अपेक्षित नहीं है। (पैरा 19)

याचिकाकर्ता ने अपनी सीमा से बाहर जाकर कार्य किया, जो अपने आप में अनुशासन का उल्लंघन है और दुराचार का गठन करता है। इसके लिए नुकसान के किसी और प्रमाण की आवश्यकता नहीं है और याचिकाकर्ता पर लगाया गया दंड न तो अत्यधिक है और न ही आरोपों की प्रकृति के अनुपात से बाहर है। (पैरा 24)

रिट याचिका खारिज की जाती है। *(पैरा 31)*

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री पुरनेंदु सिंह
सी. ए. वी. जजमेंट
तारीख: 19-07-2024

याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकीलों श्री अरूप कुमार चोंगदार, श्री नजीर अंसारी और सुश्री ईशा तथा प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकीलों श्री प्रभाकर झा, श्री अमितेश झा को सुना गया।

2. याचिकाकर्ता ने रिट याचिका के कंडिका सं.1 में निम्नलिखित राहतों के लिए प्रार्थना की है:

(i) प्रत्यर्थी बैंक-सह-अपीलीय प्राधिकरण के अध्यक्ष के हस्ताक्षर के तहत जारी ज्ञापन संख्या एचओ/डीएडी//04/11- 12/संख्या 713 दिनांक 09.11.2011 में निहित आदेश को रद्द करने के लिए आदेश या कोई अन्य उपयुक्त याचिका, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जिसके द्वारा और जहां याचिकाकर्ता द्वारा दिनांकित 05.09.2011 अपील के तहत याचिकाकर्ता द्वारा अपनी अपील में उठाए गए बिंदुओं पर चर्चा किए बिना भी खारिज कर दिया गया है;

(ii) प्रत्यर्थी बैंक-सह-अनुशासनात्मक प्राधिकरण के महाप्रबंधक के हस्ताक्षर के तहत जारी ज्ञापन एचओ/डीएडी/04/11-12/सं.422 दिनांक 27.7.2011 में निहित आदेश को रद्द करने और ज्ञापन संख्या 423 दिनांक 27.7.2011 के माध्यम से सूचित करने के लिए प्रमाण पत्र या कोई अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करने के लिए, जिसके तहत और जहां याचिकाकर्ता के तहत उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक (अधिकारी और कर्मचारी) सेवा विनियम, 2010 के विनियम 39 (2) (बी) (vi) के संदर्भ में सेवा से बर्खास्तगी का अत्यधिक जुर्माना लगाया गया था।

(iii) प्रतिवादी प्राधिकारियों को आदेश या अन्य कोई उचित आदेश या निर्देश जारी करने के लिए कि वे इस याचिकाकर्ता को बैंक की सेवा में पुनः बहाल करें तथा उसे सभी परिणामी लाभ, जैसे बकाया वेतन आदि का भुगतान करें तथा उसे 31.7.2011 को सामान्य सेवानिवृत्ति की तिथि तक निरंतर सेवा में मानें;

(iv) इस माननीय न्यायालय द्वारा इस घोषणा के लिए कि याचिकाकर्ता को दी गई सजा आरोपों की गंभीरता के लिए आश्चर्यजनक रूप से असमान है, विशेष रूप से इस बात को ध्यान में रखते हुए कि बैंक की निधि में वितीय गबन या नुकसान का कोई आरोप नहीं है।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को शुरू में 04.12.1980 को प्रतिवादी बैंक में लिपिक –सह-रोकड़पाल के रूप में नियुक्त किया गया था। याचिकाकर्ता को 14.06.2000 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था, हालांकि बाद में अपीलीय प्राधिकरण ने सहानुभूति के आधार पर याचिकाकर्ता को लिपिक रोकड़पाल के उसी पद पर फिर से नियुक्त करने का फैसला किया। इसके बाद, वह प्रत्यर्थी बैंक में शामिल हो गए लेकिन प्रत्यर्थी बैंक के अध्यक्ष ने उन्हें फिर से बर्खास्त कर दिया। यही मुकदमेबाजी के पहले के दौर का विषय था, जो अंततः इस माननीय न्यायालय के 08.05.2002 के आदेश में परिणत हुआ, जिसमें 2010 के सी.डब्ल्यू.जे.सी संख्या 3612 [रिट आवेदन के अनुलग्नक 4] में पारित किया गया, जिसके तहत याचिकाकर्ता के बर्खास्तगी आदेश को प्रतिवादी बैंक को याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता के साथ रद्द कर दिया गया।

4. अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई। आरोप पत्र जारी किया गया और उसके बाद जांच की गई, जिसमें याचिकाकर्ता को आरोपों का दोषी पाया गया। अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने ज्ञापन संख्या 422, दिनांक 27.07.2011 में निहित दंड का आदेश पारित किया, जिसे अपीलीय प्राधिकरण ने ज्ञापन संख्या 713, दिनांक 09.11.2011

में निहित आदेश के माध्यम से बरकरार रखा, अपील को खारिज कर दिया। याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान की गई प्रार्थना में संशोधन करते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी है, जिसमें कहा गया है कि 27.07.2011 का बर्खास्तगी आदेश सेवानिवृत्ति की तिथि अर्थात 31.07.2011 से ठीक पहले पारित किया गया था तथा याचिकाकर्ता ने अनजाने में 24.06.2011 की जांच रिपोर्ट (मुख्य रिट याचिका का अनुलग्नक 10) को इस आधार पर चुनौती नहीं दी कि 12 आरोपों में से आरोप संख्या 9 तथा 11 को छोड़कर सभी सिद्ध पाए गए हैं। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक (अधिकारी एवं कर्मचारी) सेवा विनियमन, 2010, जिसे आगे "सेवा विनियमन, 2010" के रूप में संदर्भित किया गया है, के विनियमन 39(2)(बी)(vi) के अनुसार सेवा से बर्खास्तगी का दंड दिया है। इसके बाद याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी बैंक के अध्यक्ष के समक्ष अपील दायर की, जिन्होंने अनुशासनात्मक प्राधिकरण के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया और अपील को खारिज कर दिया गया। जुर्माने के आदेश से व्यथित याचिकाकर्ता ने वर्तमान रिट याचिका को दायर किया है।

<u>जमा करना</u>

5. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान रिट आवेदन में, याचिकाकर्ता इस न्यायालय की एक समन्वित पीठ द्वारा दी गई स्वतंत्रता के संदर्भ में प्रतिवादी बैंक द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही के आधार पर सेवा से अपनी बर्खास्तगी से व्यथित है। अनुशासनात्मक कार्यवाही दिनांक 06.10.2010 को बारह (12) आरोपों वाले आरोप-पत्र जारी करके शुरू की गई थी। याचिकाकर्ता का तर्क है कि 12 आरोपों में से आरोप संख्या 9 और 11 को छोड़कर सभी साबित हो गए। याचिकाकर्ता ने तर्क दिया है कि

आरोप ज्ञापन स्वयं दोषपूर्ण है, क्योंकि इसमें सेवा विनियमन, 2010 के तहत आवश्यक निश्चित और अलग आरोप शामिल नहीं थे। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि 12 आरोपों में से किसी में भी प्रासंगिक तिथि, समय, स्थान या प्रतिवादी बैंक के प्रासंगिक परिपत्र/निर्देश शामिल नहीं थे जिनका उल्लंघन किया गया है। इसके अलावा, आरोप पत्र के साथ प्रत्यर्थी बैंक द्वारा भरोसा किए जाने वाले दस्तावेजों की सूची या कार्यवाही के दौरान जांच के लिए प्रस्तावित गवाहों की सूची नहीं थी। याचिकाकर्ता ने 06.10.2010 के आरोप ज्ञापन पर अपने दिनांक 13.10.2010 के उत्तर के माध्यम से इन मुद्दों को उठाया था और प्रतिवादी बैंक को संबंधित दस्तावेज आदि प्रदान करने का अनुरोध करते हुए कई अनुस्मारक भेजे थे। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को उचित अवसर दिए बिना अनुशासनात्मक कार्यवाही अचानक समाप्त कर दी गई, क्योंकि उनके अनुरोध के बावजूद, याचिकाकर्ता को कुछ बचाव प्रदर्शन पेश करने और तीन गवाहों की जांच करने की अनुमति नहीं दी गई थी। 24.06.2011 की जांच रिपोर्ट के अनुसार, आरोप संख्या 1 से 8, 10 और 12 साबित पाए गए। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जांच रिपोर्ट में जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया है, वे न तो उन्हें दिए गए और न ही अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान प्रासंगिक गवाहों की जांच करके उन्हें उचित रूप से साबित किया गया। साथ ही, याचिकाकर्ता द्वारा एकमात्र प्रबंधन गवाह से जिरह करने की अनुमति नहीं दी गई। विद्वान अधिवक्ता ने 07.07.2011 को एक उत्तर प्रस्तुत किया था, जिसमें उक्त जानकारी को अनदेखा करते हुए अनुशासनात्मक कार्यवाही में उपरोक्त कमियों को उजागर किया गया था। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने 27.07.2011 को बर्खास्तगी का विवादित आदेश पारित किया था।

6. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि जांच कार्यवाही के दौरान प्रबंधन द्वारा प्रदर्शन प्रस्तुत किए गए थे और चिह्नित किए गए थे, हालांकि, वे याचिकाकर्ता को प्रदान

नहीं किए गए थे। इसके अलावा, प्रत्यर्थी बैंक ने याचिकाकर्ता दवारा उठाए गए इस आधार से भी इनकार नहीं किया है कि उसे एकमात्र प्रबंधन गवाह से प्रतिपरीक्षण जिरह- करने की अनुमति नहीं थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी का यह तर्क कि प्रबंधन गवाह ने केवल प्रदर्शन प्रस्तुत किए थे और कोई मुख्य परीक्षा दर्ज नहीं की गई थी और इस प्रकार, याचिकाकर्ता को प्रतिपरीक्षा का अवसर देने का कोई अवसर नहीं था, सही नहीं है।

7. उपरोक्त पृष्ठभूमि में विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी बैंक इस तथ्य का खंडन करने में सक्षम नहीं है कि प्रबंधन द्वारा भरोसा किए जाने वाले गवाहों या दस्तावेजों की कोई सूची याचिकाकर्ता को आरोप पत्र के साथ नहीं दी गई थी, जो न केवल बैंक के विनियमन का उल्लंघन करती है, बल्कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का भी उल्लंघन करती है। इस संबंध में, उन्होंने प्रस्तुत किया कि यह कानून का भी सुस्थापित सिद्धांत है कि वैधानिक कर्तव्य के अलावा, प्रत्येक प्राधिकरण पर यह आवश्यक है कि वह नागरिक परिणामों वाले किसी भी आदेश को पारित करने से पहले प्रभावित पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर दे। सर्वोच्च न्यायालय ने ***चेयरमैन स्टेट बैंक ऑफ इंडिया और अन्य बनाम एम.जे. जेम्स*** के मामले में ***(2022) 2 एससीसी 201*** के पैराग्राफ संख्या 28, 29 और 32 में रिपोर्ट की है:

> *"28. पारंपरिक अंग्रेजी कानून ने पूर्वाग्रह के खिलाफ नियम को मान्यता दी और महत्व दिया कि कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के कारण में न्यायाधीश नहीं होगा अर्थात प्रोप्रिय कारण में निमो डेबेट एसे जूडेक्स; और दूसरे या दोनों पक्षों को सुनने का दायित्व क्योंकि किसी भी व्यक्ति की निंदा नहीं की जानी चाहिए, अर्थात ऑडियो अल्टरम पार्टेम। इनके लिए, कभी-कभी सहायक नियमों के रूप में वर्णित नए पहलू विकसित हुए हैं, जिसमें निर्णय के समर्थन में कारण देना भी शामिल है। फिर भी, अदालतों ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि प्राकृतिक न्याय के नियम लचीले हैं और उनका अनुप्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों के साथ-साथ वैधानिक प्रावधान, यदि लागू हो, तो प्रभावित अधिकार की*

प्रकृति और परिणामों पर निर्भर करता है। ए. के क्राईपाक बनाम भारत संघ (ए. के. क्राईपाक बनाम भारत संघ. (1969) 2 एस. सी. सी. 262] में संविधान पीठ ने हमारे संविधान के तहत प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतो की भूमिका पर ध्यान देते हुए कहा कि चूंकि राज्य का प्रत्येक अंग कानून के शासन द्वारा नियंत्रित और विनियमित है, इसलिए न्यायपूर्ण और निष्पक्ष रूप से कार्य करने की आवश्यकता है, न कि मनमाने ढंग से या मनमाने ढंग से। अर्ध-न्यायिक या प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग में निहित मानी जाने वाली प्रक्रियाएं वे हैं जो एक न्यायपूर्ण और निष्पक्ष निर्णय सुनिश्चित नहीं करती है। किसी मामले में प्राकृतिक न्याय का कौन सा विशेष नियम लागू होना चाहिए, यह काफी हद तक उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, उस कानून के ढांचे, जिसके तहत जांच की जाती है और उस उद्देश्य के लिए नियुक्त व्यक्तियों के निकाय या न्यायाधिकरण के गठन पर निर्भर करता है। जब कोई शिकायत की जाती है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है, तो अदालत को यह तय करना चाहिए कि मामले के तथ्यों में न्यायपूर्ण निर्णय के लिए उस नियम का पालन आवश्यक था या नहीं।"

29. राहत पाने के लिए पूर्वाग्रह दिखाने के महत्व पर कानूनी स्थिति भी बताई जानी चाहिए। स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एस. के. शर्मा (स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एस. के. शर्मा, (1996) 3 एस. सी. सी. 364] में इस न्यायालय की एक खंड पीठ ने "पर्याप्त अवसर" और "कोई अवसर नहीं" के बीच अंतर किया और कहा कि पूर्वाग्रह अपवाद बाद के मामले में अधिक विशेष रूप से काम करता है। यह निर्णय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को मूर्त रूप देने वाले कानून के प्रक्रियात्मक और मूल प्रावधानों की भी बात करता है, जिसका उल्लंघन होने पर, उसे राहत प्रदान करने के लिए वादी को पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ता है। सिद्धांत को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया गया था: (एससीसी पृष्ठ 389, पैरा 32)

32. अब, पिछले कंडिका में हमारे द्वारा दिए गए चित्रण पर वापस आते हुए, क्या उपखंड (iii) के उपरोक्त उल्लंघन के आधार पर सजा और पूरी जांच को दरकिनार करना न्याय के हित में होगा या यह इसका खंडन होगा? हमारी सम्मानजनक राय में, यह बाद वाला होगा। न्याय का अर्थ है दोनों पक्षों के बीच न्याय। न्याय के हित समान रूप से मांग करते हैं कि दोषियों को दंडित किया जाना चाहिए और तकनीकी और अनियमितताएं जो न्याय की विफलता का कारण नहीं बनती हैं, उन्हें न्याय के उद्देश्यों को विफल करने की अनुमति नहीं दी जाती है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के

साधन हैं। उन्हें बिल्कुल विपरीत लक्ष्य प्राप्त करने के लिए विकृत नहीं किया जा सकता है। यह एक प्रतिकूल अभ्यास होगा।"

8. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि बर्खास्तगी का उक्त विवादित आदेश दिनांक 27.07.2011 किसी भी ठोस और वैध कारणों से रहित है। इसके अलावा, दिनांक 27.07.2011 का बर्खास्तगी का विवादित आदेश बाहरी सामग्री और टिप्पणियों पर आधारित है जो अनुशासनात्मक कार्यवाही का हिस्सा नहीं थे। इस संबंध में, विद्वान वकील ने इस न्यायालय का ध्यान दिनांक 27.07.2011 यानी बर्खास्तगी के विवादित आदेश में की गई एक टिप्पणी की ओर आकर्षित किया है। *"उपरोक्त को देखते हुए यह स्पष्ट है कि सी. एस. ई. संदिग्ध सत्यनिष्ठा, बेईमान, भरोसेमंद नहीं है और उसके कार्य बैंक के हित के लिए हानिकारक हैं, जिस पर बैंक जैसे वित्तीय संस्थान में काम करते हुए कोई भरोसा नहीं किया जा सकता है।"* विद्वान अधिवक्ता ने जोर देकर कहा कि आरोप ज्ञापन में याचिकाकर्ता की ईमानदारी, बेईमानी या विश्वसनीयता के बारे में कोई आरोप नहीं लगाया गया था और इसलिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी ऐसे अप्रमाणित आरोपों के आधार पर दंड लगाने के लिए आगे नहीं बढ़ सकता था जो पूरी अनुशासनात्मक कार्यवाही से अलग हैं। यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत वैधानिक अपील को भी अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिनांक 09.11.2011 के आदेश के अनुसार एक यांत्रिक और मनमाने तरीके से याचिकाकर्ता द्वारा अपने अपील ज्ञापन में उठाए गए विस्तृत आधारों पर ध्यान दिए बिना पारित एक गैर-स्पीकिंग आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी का आदेश पूरी तरह से गैर-विवेकपूर्ण है और बर्खास्तगी का दंड याचिकाकर्ता के खिलाफ साबित आरोपों के लिए पूरी तरह से असंगत है।

9. *इसके विपरीत,* प्रत्यर्थियों की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जब याचिकाकर्ता क्षेत्रीय झांझरपुर, जिला-मधुबानी में कार्यालय सहायक के रूप में काम कर रहा था, तो आरोप पत्र संख्या संख्या/डीएडब्ल्यू/03/10-11/सं.218 दिनांक 06.10.2010 को उनके चूक और कमीशन के कार्य के लिए जारी किया गया था, जो उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक (अधिकारी और कर्मचारी) सेवा कार्यालय विनियमन, 2008 के विनियमन 17 और 19 के तहत कदाचार का गठन करता है, जिसमें विनियमन 38 के तहत जुर्माना लगाया गया था कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कुल 12 आरोप लगाए गए थे।

10. उन्होंने आगे कहा कि पूछताछ प्राधिकरण और प्रस्तुतकर्ता अधिकारी को क्रमशः पत्र संख्या एचओ/डीएडब्ल्यू/04/11-12/279 और 279ए दिनांक 19.10.2010 के माध्यम से नियुक्त किया गया था और याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय जांच शुरू की गई थी जो जांच कार्यवाही की 18 बैठकों के बाद 27.05.2011 पर समाप्त हुई। प्रबंधन प्रतिनिधि/प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने 15.12.2010 को दस्तावेजी अभियोजन साक्ष्य के रूप में 19 (उन्नीस) दस्तावेज/कागजात और 1 (एक) प्रबंधन गवाह प्रस्तुत किए। बचाव पक्ष ने अपने बचाव में विभागीय जांच के दौरान बचाव साक्ष्य के रूप में 25 (बीस) डीईएक्स और 03 (तीन) गवाह पेश किए। इसके अलावा प्रस्तुतकर्ता अधिकारी द्वारा एक लिखित संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया था और उसे याचिकाकर्ता को अपनी लिखित संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करने की सलाह के साथ भेजा गया था। हालांकि, याचिकाकर्ता ने कोई लिखित विवरण प्रस्तुत नहीं किया। इसके बाद, जांच अधिकारी ने 24.06.2011 को अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किए, जिसमें आरोप संख्या 01, 02, 03, 04, 05, 06,07,08,10, और 12 को सिद्ध माना गया तथा आरोप संख्या 09 और 11 को सिद्ध नहीं माना गया।

11. विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि जांच प्राधिकरण के निष्कर्ष याचिकाकर्ता को 28.06.2011 पर भेजे गए थे और उन्हें रिपोर्ट को अच्छी तरह से पढ़ने और जांच अधिकारी के निष्कर्षों के संबंध में अपना निवेदन प्रस्तुत करने की सलाह दी गई थी। याचिकाकर्ता ने 07.07.2011 को जाँच प्राधिकरण के निष्कर्षों के संबंध में अपना निवेदन प्रस्तुत किया जिसमें याचिकाकर्ता ने न तो अपने बचाव में कोई ठोस कारण प्रस्तुत किया और न ही आरोपों को गलत साबित करने के लिए अपने समर्थन में कोई नया तथ्य लाया। बैंक के प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की ओर से दायर लिखित दलीलों सहित भौतिक तथ्यों, साक्ष्यों और रिकॉर्ड पर पूर्ण विचार करने के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने पाया कि जांच करने के लिए जांच प्राधिकरण द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया उचित और न्यायोचित है और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन का कोई भी मामला अनुशासनात्मक प्राधिकरण के संज्ञान में नहीं आया और उसने बर्खास्तगी का आदेश पारित किया।

12. विद्वान वकील ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता को अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए पर्याप्त अवसर दिया गया था। जाँच प्राधिकरण द्वारा दिए गए निष्कर्षों से पता चलता है कि जाँच प्राधिकरण ने न केवल साक्ष्यों पर विचार किया है, बल्कि प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के साथ-साथ याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई दलीलों को भी ध्यान में रखा है। अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने दस्तावेजों, जांच कार्यवाहियों, प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के लिखित संक्षिप्त विवरण, बचाव याचिकाकर्ता के लिखित संक्षिप्त विवरण, जांच प्राधिकरण के निष्कर्षों और आरोप-वार विश्लेषण के साथ रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया था। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पत्र संख्या एचओ/डीएडी/04/11-12/सं.422 दिनांक 27.07.2011 के माध्यम से याचिकाकर्ता की बर्खास्तगी के लिए एक

समेकित दंड दिया गया था, जो सामान्यतः उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक (अधिकारी कर्मचारी) सेवा विनियम, 2010 के विनियम 39 (2) (बी) (vi) के अनुसार भविष्य में रोजगार के लिए अयोग्यता होगी। विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता, अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेश से व्यथित होने के कारण, अपीलीय प्राधिकरण यानी बैंक के अध्यक्ष के समक्ष अपील को प्राथमिकता दी। अपीलीय प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता की अपील दिनांक 05.09.2011 पर विचार किया और अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेश दिनांक 27.07.2011 के खिलाफ उसकी अपील में उठाए गए बिंदुओं/तर्कों की जांच की। आदेश की पूरी तरह से जांच करने पर अपीलीय प्राधिकरण को अनुशासनात्मक प्राधिकरण के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश नहीं मिली। अपीलीय प्राधिकरण ने साबित किए गए आरोपों के संबंध में अनुशासनात्मक प्राधिकरण के निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की, जो आरोपों की गंभीरता के अनुरूप साबित हुए और इस प्रकार, बैंक के अध्यक्ष यानी अपीलीय प्राधिकरण ने अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा याचिकाकर्ता को दिए गए दंड को बरकरार रखा। बैंक के प्रतिनिधि ने उनके समर्थन में 19 प्रबंधन प्रदर्शन प्रस्तुत किए। प्रबंधन प्रदर्शनी एम.ई.एक्स.-1 से एम.ई.एक्स.-19 को बैंक के प्रतिनिधि, के अनुरोध पर जांच प्राधिकरण द्वारा सभी प्रदर्शनों पर चिह्नित किया गया था। जिन्हें जाँच कार्यवाही में दर्ज किया गया है और इन सभी दस्तावेजों को याचिकाकर्ता को सौंप दिया गया था, जिन्हें जाँच कार्यवाही रजिस्टर में भी दर्ज किया गया था और याचिकाकर्ता ने स्वयं कार्यवाही के कार्यवृत और प्रदर्शनों की प्राप्ति की पुष्टि की, इसलिए याचिकाकर्ता को सौंप दिया गया। उन्होंने आगे कहा कि-

- शुल्क संख्या 1 प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,2,3,7,8,9,10,13,18 और 19 प्रदर्शित किए गए और चिह्नित किए गए।

- शुल्क संख्या 2- प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,4,5,6,8,9 8 और 13 प्रदर्शित किए गए और चिह्नित किए गए।

- शुल्क संख्या 3-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,8 और 10 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 4-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,8,9,11,12,14,15 प्रदर्शित किए गए और चिह्नित किए गए।

- शुल्क संख्या 5-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,8,10,16 और 17 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 6-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,16 और 17 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 7 प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स. 1,8,10 और 17 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 8-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स.-1, 10 और 17 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 9-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स-1 का उत्पादन और चिह्नित किया गया था।

- शुल्क संख्या 10 और 11 के संदर्भ में प्रबंधन एम.ई.एक्स-1 85 10 को उत्पादित और चिह्नित करता है।

- शुल्क संख्या 12-प्रबंधन के संदर्भ में एम.ई.एक्स.-6,8,9,10,11,12,13,14,15,16,17 और 18 प्रदर्शित किए गए और चिह्नित किए गए।

13. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकरण यानी बैंक के अध्यक्ष के समक्ष जुर्माने के आदेश के खिलाफ 05.09.2011 को अपील दायर की थी। अपीलीय प्राधिकरण ने अनुशासनात्मक प्राधिकरण के दिनांक 20.07.2011 के आदेश के खिलाफ याचिकाकर्ता की ओर से उठाए गए प्रत्येक बिंदुओं/तर्कों की जांच की, और अभिलेखों की अच्छी तरह से जांच करने के बाद, अपीलीय प्राधिकरण को साबित किए गए आरोपों के संबंध में अनुशासनात्मक प्राधिकरण के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश नहीं मिली, और इस तरह, बैंक के अध्यक्ष यानी अपीलीय प्राधिकरण ने दिनांक 09.11.2011 के आदेश के तहत अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता को दी गई सजा को बरकरार रखा।

14. उपरोक्त पृष्ठभूमि में विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक कार्यवाही में अपनी बेगुनाही साबित करने का पर्याप्त अवसर दिया गया था। अनुशासनात्मक प्राधिकरण बैंक के प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के साथ-साथ याचिकाकर्ता की ओर से दायर लिखित दलीलों सहित विभागीय कार्यवाही की पूरी सामग्री, साक्ष्य और रिकॉर्ड पर विचार करने के बाद बर्खास्तगी की सजा देने के लिए आगे बढ़ा है। उन्होंने आगे कहा कि अपीलीय प्राधिकरण ने भी, अभिलेख पर सामग्री की जांच और विचार करने

के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा प्राप्त निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने की कोई गुंजाइश नहीं पाई और इसलिए अपील को खारिज कर दिया।

15. उन्होंने आगे कहा कि यह अभिलेख में है कि याचिकाकर्ता की सेवाएं दो बार समाप्त की गई थी और माननीय उच्च न्यायालय, पटना के सीडब्ल्यूजेसी संख्या 3612/2010 में पारित आदेश दिनांक 30.03.2010 के आलोक में उन्हें प्रारंभिक वेतन पर पुनः नियुक्त किया गया था। उपरोक्त तथ्यों के मद्देनजर, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता बैंक का कर्मचारी है और उसकी चूक और कमीशन का कार्य संदिग्ध है और उसका कार्य बैंक के हित के लिए हानिकारक है। याचिकाकर्ता बैंक जैसे वित्तीय संस्थान में कार्यरत है। यह भी स्पष्ट है कि इस तथ्य के बावजूद कि याचिकाकर्ता को पूर्व में भी दंडित किया गया था, लेकिन उसने खुद को नहीं सुधारा और सभी निर्धारित मानदंडों और बैंकिंग नियमों का उल्लंघन करते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वहन/कार्य करना जारी रखा, जो उससे अपेक्षित नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि माननीय न्यायालय द्वारा सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 3612/2010 में दिनांक 30.03.2010 को पारित आदेश का बैंक द्वारा पूर्णतः अनुपालन किया गया।

16. पार्टियों को सुना।

<u>विश्लेषण</u>

17. इससे पहले कि मैं वर्तमान मामले के तथ्यों और याचिकाकर्ता द्वारा मांगी गई राहत के साथ आगे बढ़ूं, मैं पाता हूं कि याचिकाकर्ता के आचरण और उपरोक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में याचिकाकर्ता को हुए दंड आदेश का विश्लेषण करने के लिए, यह स्वीकार किया जाता है कि याचिकाकर्ता को शुरू में पूर्ववर्ती कोशी क्षेत्रीय लिपिक ग्रामीण बैंक में लिपिक-

सह-रोकड़पाल के रूप में नियुक्त किया गया था, जिसे बाद में उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक में विलय कर दिया गया है। याचिकाकर्ता ने 04.12.1980 को अपना योगदान जमा किया था। एक साल की परिवीक्षा के बाद, याचिकाकर्ता को क्लर्क-सह-कैशियर के रूप में संपुष्टि की गई। याचिकाकर्ता ने विभिन्न शाखाओं में 20 से अधिक वर्षों तक बैंक की सेवा की। याचिकाकर्ता को दो बार सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था और 2010 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 3612 में पारित आदेश के आलोक में, याचिकाकर्ता को प्रारंभिक वेतन पर फिर से नियुक्त किया गया था। 19.05.1992 को, याचिकाकर्ता को आरोप पत्र जारी किया गया था और याचिकाकर्ता को 14.06.2000 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। याचिकाकर्ता को 02.09.2000 पर दया के आधार पर प्रारंभिक वेतन पर फिर से नियुक्त किया गया था। याचिकाकर्ता की परिवीक्षा अवधि दिनांक 17.12.2001 के पत्र में निहित निर्णय द्वारा बढ़ा दी गई थी। इसके बाद पुनर्नियुक्ति की शर्त का पालन करने में विफल रहने के आधार पर, याचिकाकर्ता के कदाचार के लिए दिनांकित 08.03.2002 पत्र के माध्यम से एक आरोप ज्ञापन जारी किया गया था। परिवीक्षा अवधि के बाद याचिकाकर्ता की सेवाएं संतोषजनक नहीं पाई गई, इसलिए एक महीने का अग्रिम वेतन देकर 08.05.2002 दिनांकित पत्र के माध्यम से 18.03.2002 से समाप्त कर दिया गया। समाप्ति के आदेश के खिलाफ याचिकाकर्ता ने 2010 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 3612 को दायर किया था। 2010 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 3612 में पारित मुख्य निर्देश को पुनः प्रस्तुत करना प्रासंगिक है क्योंकि अन्य बातों के साथ-साथ 30.03.2010 का आदेश इस प्रकार है:-

> *"सभापति के निर्देश दिनांकित ज्ञापन 20.9.2000, अनुलग्नक 4 में निहित हैं। तदनुसार, मैंने 08.05.2002, अनुलग्नक 2 के समाप्ति नोटिस को दरकिनार कर दिया और बैंक को याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू करने की*

स्वतंत्रता प्रदान की ताकि उसे उन आरोपों पर अपना बचाव करने का अवसर दिया जा सके जो उसके खिलाफ दिनांक 08.03.2002, अनुलग्नक 1 के ज्ञापन के तहत लगाए गए हैं। यदि बैंक याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने का निर्णय लेता है तो उसे विभागीय कार्यवाही के निपटारे तक वर्तमान वेतन की अनुमति दी जाएगी, लेकिन समाप्ति की तारीख तक 08.05.2002 के बीच की अवधि के लिए वेतन का बकाया कार्यवाही के परिणाम के अधीन होगा। यदि बैंक याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्यवाही शुरू नहीं करता है. तो याचिकाकर्ता को एक महीने के भीतर वेतन के पूरे बकाया का भुगतान किया जाना चाहिए।"

18. इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.03.2010 के अनुपालन में ज्ञापन संख्या एचओ/डीएडब्ल्यू/03/10-11/ संख्या 281 दिनांक 06.10.2010 के तहत याचिकाकर्ता को कदाचार के कथित आरोप पर आरोप पत्र जारी किया गया, जिस पर विनियमन 2008 की धारा 38 के अंतर्गत जुर्माना लगाया गया। जांच प्राधिकारी और प्रस्तुतकर्ता अधिकारी नियुक्त किए गए और याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय जांच की गई, जो जांच कार्यवाही की 18 बैठकों में 27.05.2011 को समाप्त हुई। पीठासीन अधिकारी ने साक्ष्य के रूप में 19 कागजात और एक प्रबंधन गवाह पेश किया। याचिकाकर्ता ने विभागीय जांच के दौरान 25 सबूत और 3 गवाह पेश किए। पीठासीन अधिकारी ने लिखित विवरण प्रस्तुत किया था जिसे याचिकाकर्ता को भी सौंप दिया गया था। याचिकाकर्ता ने अभिलेख पर सामग्री के आधार पर कोई संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत नहीं किया। जांच अधिकारी ने 24.06.2011 को अपना निष्कर्ष प्रस्तुत किया, जिसमें आरोप संख्या 9 और 11 को छोड़कर सभी आरोपों को सिद्ध माना गया। जांच अधिकारी का निष्कर्ष 28.06.2011 को याचिकाकर्ता को अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए भेजा गया। याचिकाकर्ता ने 07.07.2011 को अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और उन्हें सेवा से बर्खास्त करने का जुर्माना लगाया। चूक और कमीशन का कार्य बैंक के हित के लिए हानिकारक है जिस पर कोई विश्वास नहीं

किया जा सकता है। याचिकाकर्ता का दावा है कि आरोप पत्र के साथ होने वाले दस्तावेजों की सूची नहीं थी। याचिकाकर्ता का दावा है कि आरोप पत्र के साथ बैंक द्वारा भरोसा किए जाने वाले दस्तावेजों की सूची या कार्यवाही के दौरान जांच किए जाने वाले गवाहों की सूची नहीं थी। मुझे इस संबंध में उनके दिनांकित 13.10.2010 उत्तर में कमजोर संदर्भ मिलता है। याचिकाकर्ता को पर्याप्त अवसर दिया गया था और यह नहीं कहा जा सकता है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही अचानक समाप्त हो गई थी। याचिकाकर्ता ने तीन गवाहों से पूछताछ की थी और याचिकाकर्ता के इस इनकार को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि जांच रिपोर्ट उसे प्रदान नहीं की गई थी, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसे 28.06.2011 के आदेश के माध्यम से भेजा गया था और उसने 07.07.2011 को अपना जवाब भी प्रस्तुत किया था। याचिकाकर्ता को *"निरस्त करने"* की अनुमति नहीं दी जा सकती है और *पुनर्व्यवस्थित करें"*। जाँच अधिकारी का निष्कर्ष इस हद तक कि *"उपरोक्त को देखते हुए यह स्पष्ट है कि सी.एस.ई. संदिग्ध सत्यनिष्ठा, बेईमान, भरोसेमंद नहीं है और उसके कार्य बैंक के हित के लिए हानिकारक हैं जिन पर बैंक जैसे वित्तीय संस्थान में काम करते समय कोई विश्वास नहीं किया जा सकता है।"*

19. उपरोक्त तथ्य से यह स्पष्ट है कि इस तथ्य के बावजूद कि याचिकाकर्ता को बैंक का कर्मचारी होने के नाते दो बार चूक और कमीशन की कार्रवाई के लिए नियुक्त किया गया था और किसी भी तरह से, यह नहीं कहा जा सकता है कि यह संदिग्ध नहीं है क्योंकि उसके कार्य बैंक के हित के लिए हानिकारक हैं। याचिकाकर्ता को अतीत में दंडित किया गया था लेकिन उसने खुद में संशोधन नहीं किया और बैंकिंग नियमों में निर्धारित मानदंडों का उल्लंघन करना जारी रखा जो एक बैंक कर्मचारी से स्वीकार्य नहीं है।

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **क्षेत्रीय प्रबंधक, यू.पी.एसआरटीसी बनाम होती लाल मामले में, 2003 (3) एससीसी 605** में रिपोर्ट की, पृष्ठ 614 एसएससी पर निम्नलिखित टिप्पणी की है:

"यदि प्रभारित कर्मचारी विश्वास का पद धारण करता है जहां ईमानदारी और सत्यनिष्ठा कार्य करने की अंतर्निहित आवश्यकताएं हैं, तो मामले से नरमी से निपटना उचित नहीं होगा। ऐसे मामलों में कदाचार से सख्ती से निपटना पड़ता है। जहाँ व्यक्ति सार्वजनिक धन का लेनदेन करता है या वितीय लेन-देन में लगा हुआ है या एक प्रत्ययी क्षमता में कार्य करता है, वहाँ सर्वोच्च स्तर की ईमानदारी और विश्वास एक आवश्यक और असाधारण है। उस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय की खंड पीठ के निष्कर्ष उचित नहीं प्रतीत होते हैं। हम इसे दरकिनार करते हैं और बर्खास्तगी के आदेश को बरकरार रखने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को बहाल करते हैं।

21. **बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम टी जोगराम, 2007 (7) एससीसी 236** के मामले में रिपोर्ट किए गए, कानून के उक्त प्रस्ताव पर भरोसा करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या 15 में निम्नानुसार माना है: -

"15 अब तक यह कानून का अच्छी तरह से तय सिद्धांत कि न्यायिक समीक्षा निर्णय के खिलाफ नहीं है। यह निर्णय लेने की प्रक्रिया के खिलाफ है। तत्काल मामले में प्रक्रियात्मक अनियमितताओं/अवैधता का कोई आरोप नहीं है और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन का भी कोई आरोप नहीं है। प्रतिवादी के वकील ने दुर्भावना के आरोप को बनाए रखने की कोशिश की। उन्होंने यह दावा करने की कोशिश की कि प्रतिवादी ने 1996 में सिकंदराबाद शाखा के मुख्य प्रबंधक के खिलाफ मामला दर्ज किया था और प्रतिवादी के खिलाफ शुरू की गई जांच दुर्भावना का नतीजा है। हम गंजे आरोपों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। दुर्भावनापूर्ण आरोप की पुष्टि नहीं हुई। यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि दुर्भावनापूर्ण आरोप अनुमानों और अनुमानों पर आधारित नहीं हो सकते हैं। यह तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर आधारित होना चाहिए। वकील ने इस आधार पर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन पर भी जोर देने की

कोशिश की कि प्रतिवादी द्वारा आवश्यक दस्तावेज उसे प्रदान नहीं किए गए थे। अभिकथन से यह देखा जाता है कि जिन दस्तावेजों की प्रत्यर्थी द्वारा आवश्यकता मांगी गई थी, वे सभी बिल थे जो प्रत्यर्थी द्वारा स्वयं प्राधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे। इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी के प्रति कोई पूर्वाग्रह पैदा नहीं हुआ था।"

22. इस माननीय न्यायालय ने एल.पी.ए. संख्या 1555/2015 में ***सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 2573/2015 से उत्पन्न (शिबातोष दत्ता बनाम उत्तर बिहार ग्रामीण बैंक एवं अन्य)*** जिसमें भी मामले के तथ्य वर्तमान रिट याचिका के समान हैं, तथ्यों की सराहना और उक्त मामले के अपीलकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों के आधार पर, ***क्षेत्रीय प्रबंधक, उत्तर प्रदेश एसआरटीसी, इटावा (उपरोक्त), अनुशासनात्मक प्राधिकारी-सह-क्षेत्रीय प्रबंधक बनाम निकुंज बिहारी पटनायक, (1996) 6 एससीसी 69*** में रिपोर्ट, ***गणेश संत राम सिरुर बनाम भारतीय स्टेट बैंक एवं अन्य, (2005)1 एससीसी 13*** में रिपोर्ट, ***केनरा बैंक बनाम वी.के. अवस्थी ने (2005)6 एससीसी 321 में*** रिपोर्ट की, ***स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम बेला बागची एवं अन्य, ने (2005)7 एससीसी 435*** में रिपोर्ट की, ***दमोह पन्ना सागर ग्रामीण क्षेत्रीय बैंक एवं अन्य बनाम मुन्ना लाल जैन, ने (2005)10 एससीसी 84*** में रिपोर्ट की, ***स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम रमेश दिनकर पुंडे, ने (2006)7 एससीसी 212*** में रिपोर्ट की, ***स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम एस.एन.गोयल, ने (2008)8 एससीसी 92*** में रिपोर्ट की, ***महाप्रबंधक (पी), पंजाब एवं सिंध बैंक एवं अन्य बनाम दया सिंह, ने (2010)11 एससीसी 233*** में रिपोर्ट की और ***टी.एन.सी.एस. कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम के. मीराबाई, (2006)2 एससीसी 235*** में रिपोर्ट किया गया, ने सीडब्ल्यूजेसी संख्या 2573/2015 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय को बरकरार रखते हुए सजा के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया है।

23. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, 27.07.2011 दिनांकित बर्खास्तगी आदेश को गुणवक्ता पर गलत नहीं माना जा सकता है।

सजा की गुणवत्ता पर

24. याचिकाकर्ता ने एक प्रार्थना की है कि उसे दी गई सजा आरोपों की गंभीरता के लिए असमान है, विशेष रूप से याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों और उसके पिछले आचरण को देखते हुए सेवा विनियमन 2010 के विनियमन 39 (2) (बी) (6) के संदर्भ में सेवा से बर्खास्तगी के दंड के आदेश को ध्यान में रखते हुए। जहां तक याचिकाकर्ता के इस तर्क का संबंध है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दिनांक 27.07.2011 को पारित किया गया आदेश बिना सोचे-समझे पारित किया गया है और बर्खास्तगी का दंड याचिकाकर्ता के विरुद्ध साबित आरोपों के अनुपात में नहीं है, मैं पाता हूं कि याचिकाकर्ता ने अपने अधिकार से परे काम किया है और यह अपने आप में अनुशासन का उल्लंघन है और कदाचार का गठन करता है और नुकसान का कोई और सबूत आवश्यक नहीं है और याचिकाकर्ता पर लगाया गया दंड आरोपों की प्रकृति के अनुपात में अधिक या अनुपातहीन नहीं कहा जा सकता है।

25. अनुशासनात्मक कार्यवाही में दिए गए दंड में हस्तक्षेप के दायरे पर सर्वोच्च न्यायालय ने कई मामलों में विचार किया है। कुछ मामलों का संदर्भ काफी होगा। **बी. सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ और अन्य (1995) 6 एस. सी. सी. 749**, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

> *"18. उपरोक्त कानूनी स्थिति की समीक्षा से यह स्थापित होगा कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण और अपील करने पर अपीलीय प्राधिकरण, तथ्य-खोज अधिकारी होने के नाते, अनुशासन बनाए रखने की दृष्टि से*

साक्ष्य पर विचार करने की विशेष शक्ति रखते हैं। उन्हें कदाचार की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए उचित सजा देने के विवेक के साथ निवेश किया जाता है। उच्च न्यायालय/न्यायाधिकरण, न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए, आम तौर पर दंड पर अपने स्वयं के निष्कर्ष को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है और कुछ अन्य दंड नहीं लगा सकता है। यदि अनुशासनात्मक प्राधिकरण या अपीलीय प्राधिकरण द्वारा लगाई गई सजा उच्च न्यायालय/न्यायाधिकरण की अंतरात्मा को झकझोर देती है, तो यह उचित रूप से राहत को ढालेगा, या तो अनुशासनात्मक/अपीलीय प्राधिकरण को लगाए गए दंड पर पुनर्विचार करने का निर्देश देगा, या मुकदमेबाजी को छोटा करने का निर्देश देगा, तो वह स्वयं, असाधारण और दुर्लभ मामलों में, इसके समर्थन में ठोस कारणों के साथ उचित सजा दे सकता है।"

26. **ओम कुमार बनाम भारत संघ (2001) 2 एससीसी 386** में भी इसी प्रकार का विचार लिया गया था, जिसमें न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की थी:

"71. इस प्रकार, उपरोक्त सिद्धांतों और तय किए गए मामलों से, यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि जहां अनुशासनात्मक मामलों में सजा से संबंधित एक प्रशासनिक निर्णय पर अनुच्छेद 14 के तहत मनमाने द्वितीयक तरीके से सवाल उठाया जाता है, अदालत एक द्वितीयक समीक्षा प्राधिकरण के रूप में वेड्सबरी सिद्धांतों तक ही सीमित है। न्यायालय प्राथमिक समीक्षा न्यायालय के रूप में आनुपातिकता लागू नहीं करेगा क्योंकि ऐसे संदर्भ में मौलिक स्वतंत्रता का कोई मुद्दा या अनुच्छेद 14 के तहत भेदभाव लागू नहीं होता है। अदालत सजा की समीक्षा करते समय और यदि यह संतुष्ट है कि वेड्सबरी के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, तो उसे आम तौर पर सजा की मात्रा के बारे में नए निर्णय के लिए प्रशासक को मामला भेजना पड़ता है। केवल दुर्लभ मामलों में जहां अनुशासनात्मक कार्यवाही द्वारा लिए गए समय में और अदालतों में लिए गए समय में लंबी देरी हुई है, और ऐसे चरम या

दुर्लभ मामलों में अदालत सजा की मात्रा के बारे में अपने स्वयं के विचार को प्रतिस्थापित कर सकती है।"

27. **ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम अशोक कुमार अरोड़ा (1997) 3 एससीसी 72 और क्षेत्रीय प्रबंधक, यू.पी.एसआरटीसी, इटावा और अन्य बनाम होती लाल और अन्य (2003) 3 एससीसी 605** में भी यही राय ली गई है कि न्यायालय तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि सज़ा पूरी तरह से असमान न हो। **क्षेत्रीय प्रबंधक, यू.पी.एसआरटीसी, इटावा और अन्य बनाम होटी लाल और एक अन्य (ऊपरोक्त)** में, उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

"10. इस बात पर जोर दिए जाने की आवश्यकता है कि सजा की मात्रा पर विचार करते समय अदालत या न्यायाधिकरण को कारणों को दर्ज करना होगा कि यह क्यों महसूस किया जाता है कि सजा साबित किए गए आरोपों के अनुरूप नहीं था। जैसा कि कई मामलों में उजागर किया गया है जिन पर ऊपर उल्लेख किया गया है, हस्तक्षेप की गुंजाइश बहुत सीमित है और इंगित परिस्थितियों में असाधारण मामलों तक ही सीमित है। दुर्भाग्य से, वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय के आदेश के उद्धृत उद्धरणों से पला चलता है कि सजा को असमान क्यों माना गया, इसका कोई कारण नहीं बताया गया है। कारण विचाराधीन विवाद के लिए लिए गए निर्णय के दिमाग और निर्णय या निष्कर्ष पर पहुंचने के बीच जीवंत संबंध हैं। कारण बताने में विफलता न्याय से इनकार करने के बराबर है। अलेक्जेंडर मशीनरी (डडली) लिमिटेड बनाम देखें। क्रेबट्री 1974 एल. सी. आर. 120 (एन. आई. आर. सी.)]। केवल यह कथन कि यह असंगत है, पर्याप्त नहीं होगा। अदालत के समक्ष उपस्थित होने वाला एक पक्षकार, कि यह क्या है कि अदालत अपने मन को संबोधित कर रही है। यह न केवल शामिल राशि है, बल्कि मानसिक व्यवस्था, किए गए कर्तव्य का प्रकार और इसी तरह की प्रासंगिक परिस्थितियों हैं जो निर्णय लेने की प्रक्रिया में जाती हैं. इस बात पर विचार करते हुए कि क्या सजा आनुपातिक या असमान है। यदि प्रभारित कर्मचारी

विश्वास का पद धारण करता है जहां ईमानदारी और सत्यनिष्ठा कार्य करने की अंतर्निहित आवश्यकताएं हैं, तो मामले से नरमी से निपटना उचित नहीं होगा। ऐसे मामलों में कदाचार से सख्ती से निपटना पड़ता है। जहाँ व्यक्ति सार्वजनिक धन के साथ सौदा करता है या वित्तीय लेनदेन में लगा हुआ है या एक प्रत्ययी क्षमता में कार्य करता है, वहाँ सर्वोच्च स्तर की ईमानदारी और विश्वसनीयता आवश्यक और असाधारण है।"

28. वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने केवल इस आधार पर बर्खास्तगी के आदेश में हस्तक्षेप करने की मांग की है कि बैंक को कोई नुकसान नहीं हुआ है, सजा की मात्रा को कम करने के लिए शायद ही विचार किया जा सकता है जैसा कि सुप्रीम कोर्ट ने **अनुशासनात्मक प्राधिकरण-सह-क्षेत्रीय प्रबंधक और अन्य बनाम निकुंज बिहारी पटनायक (1996) 9 एससीसी 69** के मामले में स्पष्ट किया है। उक्त मामले का प्रासंगिक पैराग्राफ इस प्रकार है:

"..... बैंक के मामले में-उस मामले में, किसी अन्य संगठन के मामले में प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी को अपने अधिकार की सीमा के भीतर कार्य करना चाहिए। यदि प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी को उसके अधिकार से परे कार्य करने की अनुमति दी जाती है, तो संगठन बैंक का अनुशासन समाप्त हो जाएगा; बैंक का कामकाज अराजक और असहनीय हो जाएगा। बैंक के प्रत्येक अधिकारी को अपना छोटा सा साम्राज्य बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है जिसमें वह अनुग्रह और उदारता प्रदान करता है। कोई भी संगठन, विशेष रूप से, एक बैंक ठीक से और प्रभावी ढंग से काम नहीं कर सकता है यदि उसके अधिकारी और कर्मचारी निर्धारित मानदंडों और अनुशासन का पालन नहीं करते हैं। इस तरह के अनुशासनहीनता को इस आधार पर माफ नहीं किया जा सकता है कि यह गलत उद्देश्यों या बाहरी विचारों से प्रेरित नहीं था। अधिकार से परे काम करने का कार्य-वह भी एक ऐसा आचरण जो पर्याप्त रूप से लंबी अवधि में फैला हुआ है और जिसमें असंख्य उदाहरण शामिल हैं-अपने आप में एक कदाचार है। यदि इस तरह के कार्यों की अनुमति दी जाती है, तो कुछ मामलों में लाभ हो सकता

है, लेकिन इससे भारी नुकसान भी हो सकता है।..... जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, किसी संगठन का अनुशासन और विशेष रूप से, एक बैंक अपने प्रत्येक कर्मचारी और अधिकारियों पर निर्भर करता है जो अपने आवंटित क्षेत्र के भीतर काम करते हैं और काम करते हैं। अपने अधिकार से परे कार्य करना अपने आप में अनुशासन का उल्लंघन और विनियमन 3 का उल्लंघन है। यह विनियमन 24 के अर्थ के भीतर दुराचार का गठन करता है। हानि का कोई और प्रमाण वास्तव में आवश्यक नहीं है, हालांकि वास्तव में, इस मामले में ऐसे निष्कर्ष हैं कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने अधिकार से परे अनुमत कई अग्रिम और अधिक निकासी चिपचिपी और अपरिवर्तनीय हो गई हैं। सिर्फ इसलिए कि इसी तरह के कृत्यों से कुछ लाभ हुआ है भारी लाभ, जैसा कि उच्च न्यायालय इसे दर्शाता है- वे कम निंदनीय नहीं हैं। उन्हें निर्णय की त्रुटियों के रूप में चिह्नित करना गलत है।"

29. इसी प्रकार की टिप्पणियां सुप्रीम कोर्ट द्वारा **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम टी.जे. पॉल (1999) 4 एससीसी 759** के मामले में की गई थीं, जिन्हें नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

इसके नीचेः

"14. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के वरिष्ठ वकील, श्री पी. पी. राव ने तर्क दिया कि जांच अधिकारी ने गंभीर वित्तीय नुकसान का कोई निष्कर्ष नहीं दिया।

15. पैरा 22 (iv) में स्थूल दुराचार की परिभाषा को लेते हुए, यह स्पष्ट है कि खंड (एच) लागू नहीं होता है क्योंकि आरोप किसी भी वरिष्ठ अधिकारी के विशिष्ट आदेशों की अवज्ञा या अवज्ञा का नहीं है। पैरा 22 (iv) के खंड (1) पर आते हुए, बैंक के हितों के लिए प्रतिकूल कोई भी कार्य करना, या बैंक को गंभीर नुकसान में शामिल करने या शामिल करने की गंभीर लापरवाही या लापरवाही करना घोर कदाचार है। दूसरे शब्दों में लापरवाही के साथ गंभीर नुकसान की संभावना मामले को घोर दुराचार के दायरे में लाने के लिए पर्याप्त है। इसलिए, पर्याप्त सुरक्षा

प्राप्त नहीं करने के आधार पर जांच अधिकारी का 'घोर कदाचार' का निष्कर्ष सही है और इसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी भी सबूत पर आधारित नहीं कहा जा सकता है। इसे मामूली दुराचार के तहत पैरा 22 (vi) (सी) के साथ विपरीत किया जा सकता है जो काम की उपेक्षा और कर्तव्यों के पालन में लापरवाही से संबंधित है। हमारे विचार में, अपीलार्थियों के विद्वान वरिष्ठ वकील, श्री टी. आर. अंधारुजिना का तर्क, इसलिए, स्वीकार किए जाने का हकदार है।

16. प्रत्यर्थी के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील का तर्क इस तथ्य को नजरअंदाज करता है कि बैंक को गंभीर नुकसान में शामिल करने की गंभीर लापरवाही या लापरवाही पैरा 22 (iv) (1) के तहत बड़े कदाचार के तहत आएगी। जैसा कि ऊपर कहा गया है, यह मानते हुए भी कि कोई गंभीर लापरवाही नहीं है, साधारण लापरवाही बड़े कदाचार के तहत आएगी यदि इसके साथ-साथ गंभीर नुकसान की संभावना है और यह पैरा 22 (iv) (1) से स्पष्ट है।"

निष्कर्ष

30. वर्तमान मामले के तथ्यों में, मैं पाता हूं कि याचिकाकर्ता के खिलाफ संबंधित नियमों के तहत अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई है। उन आरोपों से जो कदाचार का गठन करते हैं, मैं पाता हूं कि पूछताछ साक्ष्य पर आधारित थी और याचिकाकर्ता को विभागीय कार्यवाही के प्रत्येक चरण में बिना किसी प्राकृतिक न्याय के नियमों का उल्लंघन किए उचित अवसर दिया गया था। अनुशासनात्मक प्राधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता आरोप का दोषी है और मैं भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में सजा के आदेश या दंड की मात्रा में हस्तक्षेप नहीं करता और साक्ष्य की समीक्षा करता हूं और साक्ष्य पर एक स्वतंत्र निष्कर्ष पर पहुंचता हूं जिसकी फिर से सराहना नहीं की जा सकती है। जाँच अधिकारी के निष्कर्ष की

पुष्टि अभिलेख पर मौजूद सामग्री द्वारा की जाती है और याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप कदाचार का गठन करते हैं। मेरा विचार है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण के दिनांकित 27.07.2011 के आदेश और दिनांकित 09.11.2011 अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पुष्टि को उपरोक्त कारण के लिए गलत नहीं ठहराया जा सकता है जैसा कि यहाँ दर्शाया गया है।

31. तदनुसार रिट याचिका खारिज कर दी जाती है। वहाँ लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

32. अंतर्वर्ती आवेदन (ओं), यदि कोई हो, तो भी लागू होते हैं। उसे भी निष्पादित समझा जाय।

(पूर्णेन्दु सिंह, न्यायमूर्ति)

संजय/-

-/आशीषसिंह

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।